

## निकल परमात्मा

ज्ञान शरीर त्रिविध कर्म मल, वर्जित सिद्ध महन्त ।  
ते हैं निकल अमल परमात्म, भोगें शर्म अनन्ता ॥  
बहिरात्मता हेय जान तजि, अन्तर आत्म हूजै ।  
परमात्म को ध्याय निरन्तर, जो नित आनन्द पूजै ॥ ६ ॥

अन्वयार्थ- (ज्ञान शरीर ) ज्ञान ही जिनका शरीर है (त्रिविध कर्म मल) तीनों प्रकार के कर्म मल से (वर्जित)रहित (महंता सिद्ध) विश्व पूज्य सिद्ध भगवान (ते) वह विश्व पूज्य सिद्ध भगवान (अमल निकल परमात्म है) राग-द्वेष एवं शरीर रूपी मल से रहित सिद्ध परमात्मा है (शर्म अनन्ता भोगे ) जो सिद्ध भगवान अनन्तानन्त सुख में निमग्न रहते है (बहिरात्मता) बहिरात्मपने को (हेय जान तज) हेय जानकर उसका त्याग करो (अन्तर आत्म हूजै) अन्तर आत्म स्वरूप प्राप्ति मे लगो (परमात्म को निरन्तर ध्याय) परमात्मा का निरन्तर ध्यान करो (जो नित आनन्द पूजै) जो सदैव आनन्द देने वाला है ।

.८२.

अन्वयार्थ- (चेतनता बिन ) चैतन्य आदि ज्ञान दर्शनादि से रहित (सो अजीव है ) अजीव है (ताके पंच भेद है ) उस अजीव तत्व के पांच भेद है - पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल(पुद्गल पंच वरन) पुद्गल के पांच वर्ण है (रस) पांच रस है (दो गंध )दोगंध है,- सुगन्ध और दुर्गन्ध (बसु फरक जाके है) स्पर्श के आठ भेद है (जिय पुद्गल को चलन सहाई ) जीव और पुद्गल को चलने में जो सहायक होता है (अनुरूपी धर्म द्रव्य) वह रूपदि रहित धर्म द्रव्य है (तिष्ठत अधर्म सहाई होय) जीव और पुद्गल को चलने में जो सहायक होता है (अनुरूपी धर्म द्रव्य) वह रूपादि रहित धर्म द्रव्य है (तिष्ठत अधर्म सहाई होय) जीव और पुद्गलों को ठहरने में जो सहायक होता है वह अधर्म द्रव्य है (जिन बिन मूर्ति निरूपी) ऐसे अधर्म द्रव्य को भी जिनेन्द्र भगवान ने अरूपी कहा है ।

भावार्थ - इस लोक मे जिनेन्द्र कथित सप्त तत्व की श्रृखला मे ज्ञेय, हेय, उपादेय, ध्येय रूप जीव तत्व की विवेचना समझी। अब चर्चा करनी है ज्ञेय- रूप अजीव तत्व की। अखिल विश्व मे चैतन्य गुण से रहित अजीव तत्व व्याप्त है। आचार्य ने पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश काल इन पांच भेदों में अजीव तत्वों को विभाजित किया है। पुद्गल में लाल पीलादि पांच वर्ण, खट्टा मिठादि पांच रस, सुगन्ध दुर्गन्ध ये दो गंध, हल्का भारी आदि आठ स्पर्श है। इस प्रकार पुद्गल के २० गुण कहे जाते है।

जीव और पुद्गल को जो चलने में उदासीन रूप से सहायक निमित्त बनता है, जैसे मछली के लिये जल, उसे अरूपी धर्म द्रव्य कहते हैं और जीव व पुद्गल को उदासीन रूप से अवस्थित करने में जो निमित्त बनता है उसे अधर्म द्रव्य कहते है, जैसे थके हुये पुरुष के लिये वृक्ष की छाया।

प्रश्न १. अजीव किसे कहते है ?

.८३.

उत्तर - चेतना से रहित तत्व को अजीव कहते है।

प्रश्न २. अजीव तत्व के कितने भेद है ?

उत्तर - पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ये पांच भेद होते है।

प्रश्न ३. पुद्गल किसे कहते है ?

उत्तर - जो पूरण और गलन स्वभाव वाला हो अर्थात जो उत्पत्ती विनाश रूप परिणामन करता रहता है उसे पुद्गल कहते है।

प्रश्न ४. पुद्गल के गुण कितने है ?

उत्तर - पुद्गल के पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध, आठ स्पर्श, इस प्रकार २० गुण है।

प्रश्न ५. पांच वर्ण कौन-कौन से हैं ?

उत्तर - काला, पीला, नीला, हरा, लाल ।

प्रश्न ६. पांच रस कौन-कौन से हैं ?

उत्तर - खट्टा, मीठा, कडुवा, चरपरा, कषायला ।

प्रश्न ७. गंध कितने हैं ?

उत्तर ३ सुगन्ध और दुर्गन्ध दो हैं ।

प्रश्न ८. स्पर्श के नाम क्या हैं ?

उत्तर ३ हल्का, भारी, कठोर, नरम, रुखा, चिकना, ठंडा, गरम ।

प्रश्न ९. धर्म द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो जीव और पुद्गल को उदासिन रूप से गमन करने में सहायक हो अर्थात् रेल के चलने को पटरी के समान जो निमित्त होता है उसे धर्म द्रव्य कहते हैं ।

.८४.

उत्तर -सेकिण्ड,मिनिट, घडी, घंटा, दिन, रात, पक्ष, मास, वर्ष आदि को व्यवहार काल कहते हैं ।

प्रश्न ६. आस्त्रव किसे कहते हैं ?

उत्तर - मिथ्यात्वादि विकार भावों से कर्मों का आत्मा की और आना आस्त्रव कहलाता है ।

प्रश्न ७. आस्त्रव के सत्तावन भेद किस प्रकार हैं ?

उत्तर - पन्द्रह योग, पांच मिथ्यात्व, बारह अविरति, पच्चीस कषायें यह सब मिलकर सत्तावन भेद हैं ।

प्रश्न ८. आस्त्रव के और भी भेद हैं क्या ?

उत्तर - आस्त्रव के मूल में दो भेद है । एक शुभास्त्रव दुसरा अशुभास्त्रव है ।

प्रश्न ९. पन्द्रह योगों के नाम किस प्रकार है ?

उत्तर - मनोयोग के चार-सत्य मनोयाग, असत्य मनोयोग, उभय मनोयोग एवं अनुभय मनोयोग ।

वचनयोग के चार इ सत्य वचनयोग, असत्य वचनयोग, उभय वचनयोग, अनुभय वचनयोग ।

कामयोग के सात - औदारिक, औदारिक मिश्र , बैक्रियिक, बैक्रियिक मिश्र, आहारक, आहारक मिश्र कार्माण ।

प्रश्न १०. मिथ्यात्व के पांच भेद किस प्रकार है ?

उत्तर - एकान्त, विपरित, वैनयिक, संशय, अज्ञान ।

प्रश्न ११. अविरति किसे कहते है तथा किस प्रकार है ?

.८५.

उत्तर - असंयम को अविरति कहते । स्पर्शन, रसना, धारण, चक्षु, कर्ण एवं मन इन छह के ऊपर नियंत्रण नहीं करना एवं पृथ्वी कायिक, जल कायिक, अग्नि कायिक, वायु कायिक, वनस्पति कायिक, त्रस कायिक इनकी रक्षा नहीं करना यह १२ अविरती है ।

प्रश्न १२. कषायों के २५ भेद किस प्रकार है ?

उत्तर - क्रोध, मान, माया, लोभ इन एक-एक के चार इ चार भेद, अनन्तानुबंध , अप्रत्यख्यान, प्रत्यख्यान एवं संज्वलन के भेद से इस प्रकार १६ कषाय और हास्य, रति, अरती, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपंशकवेद के भेद से नौ प्रकार । इस तरह कषायों के २५ भेद हुए ।

प्रश्न १३. प्रमाद किसे कहते है ?

उत्तर - आलस्य (शिथिलता) को प्रमाद कहते है ।

प्रश्न १४. प्रमाद के कितने भेद हैं ?

उत्तर - प्रमाद के १५ भेद हैं । चार विकथा, चार कषाय, पांच पापादि इन्द्रिय जन्य लम्पटता, निद्रा, स्नेह ।

प्रश्न १५. विकथा किसे कहते हैं?

उत्तर -संसार वर्धक कथओं को विकथा कहते हैं ।

प्रश्न १६. विकथाओं के नाम किस प्रकार हैं ?

उत्तर - राष्ट्र कथा, स्त्री कथा, भोजन कथा, अविनिपाल कथा अर्थात् चोर कथा, ये चार विकथायें हैं ।

.८६.

आस्त्रव त्याग और बंध संवर निर्जरा

ये हि आत्म को दुख कारण, तातें इनको तजिये ।

जीव प्रदेश बंधे विधि सों, सो बंधन कबहु न सजिये ॥

शम दमतें जो कर्म न आवै, सो संवर आदरिये ।

तप बलतै विधि झरन निर्जरा, ताहि सदा आचरिये ॥ ९ ॥

अन्वयार्थ - (ये ही) जिस मिथ्यात्व की विवेचना की जा चुकी है वह (आत्म को दुख कारण) आत्मा को दुख पहुँचाने में निमित्त है । (तातै इनको तजिये) इसलिए आश्रव के कारणों का परित्याग कर देना चाहिए । (जीव प्रदेश बंधे विधि सों) जीव के प्रदेश और कर्मों के प्रदेश दोनों का मिलना (सो बंधन) वह बंध है (कबहु न सजिये) (पूद्गल परमाणुओं का आत्मा के साथ बंध) कभी नहीं करना चाहिए । (सम दम तै) समता पूर्वक विभाव परिणामों का दमन करने से (जो कर्म न आवै) जो कर्मों का आना अवरुद्ध हो जाता है (सोंसंवर आदरिये) ऐसे संवर कासतत आचरण करना चाहिए (तप बल तै) तपस्या की शक्ति से (विधि झरन निर्जरा) सदा कर्मों का झरना निर्जरा है (ताहि) उस निर्जरा का (सदा आचरिये) सदा आचरण करना चाहिये ।

भावार्थ - इस संसार सागरमें अनादि काल से गोते खाते हुए सभी जीव अनन्त दुःखो को सहन करते आ रीहे हे । इन दुखों का मूल कारण मिथ्यात्व है । अतः मिथ्यात्व को हमेशा-हमेशा के लिये तिलांजलि देना है । आस्त्रव और बंध में मिथ्यात्व और कषाय हि कारण बनते है । जीव के रागादि परिणामों का निमित्त पाकरउ कर्म प्रदेशरें का आत्म प्रदेशों के साथं एक क्षेत्रावगाही हो जाना ही बंध है । इस बंध के कारण ही ज्ञायक स्वभावी चैतन्य आत्मा जन्म-मरण आदि सांसारिक दुःखो में उलझ

.८७.

- जाता है । ऐसा कर्म प्रदेशों का बंध किसी भी स्थिती मे हमें नहीं करना है । समता स्वभाव से विभाव परिणामों का दमन या निरोध ही संवर है । स्वभावाश्रित इस संवर का हमें भली प्रकार समादर करना है और भेद विज्ञान पूर्वक तपस्या के बल से कर्मों को क्षय करना ही निर्जरा है ऐसे परमोपकारी निर्जरा का सदेव आचरण करना चाहिए ।

प्रश्न १. आत्मा को दुःख देने वाला कौन् है ?

उत्तर - आत्मा को दुख देने वाला आस्त्रव है ।

प्रश्न २. आस्त्रव का हमें क्या करना चाहिये ?

उत्तर - आस्त्रव का हमें त्याग करना चाहिये ।

प्रश्न ३. शुभास्त्रव का भी त्याग करना है क्या ?

उत्तर - पुरुषार्थ पूर्वक अशुभास्त्रव का त्याग किया जाता है । आत्म स्वरुप में निमग्न होने पर शुभास्त्रव तो सहज में छुट जाता है ।

प्रश्न ४. बन्ध किसे कहते है ?

उत्तर - कर्मों का आत्मा के साथ मेल होने को बन्ध कहते है ।

प्रश्न ५. संवर किसे कहते है ?

उत्तर - राग-द्वेष मय विभाव भावों तथा द्रव्य कर्म का अभाव संवर है ।

प्रश्न ६. निर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र एवं तपस्या के द्वारा पूर्व संचित कर्म प्रदेशों का क्षय होना निर्जरा है ।

.८८.

मोक्ष और व्यवहार सम्यक्त्व

सकल कर्म तै रहित अवस्था, सो शिव थिर सुखकारी ।

इह विध जो सरधा तत्वन की, सी समकित व्यवहारी ॥

देव जिनेन्द्र गुरु परिग्रह बिन, धर्म दया जुत सारो ।

ये हु मान समकित को कारण, अष्ट अंग जुत धारो ॥ १० ॥

अन्वयार्थ - (सकल कर्म तै रहित अवस्था) ज्ञानावारणादि समस्त कर्मों से रहित अवस्था (सो शिव ) वह मोक्ष स्वरूप है (थिर सुखकारी) और अक्षुण्ण अतिन्द्रिय सुखदायक है (इह विध जो सरधा तत्वन की) इस प्रकार से जो सातों तत्वों की यथार्थ श्रद्धा है (सो समकित व्यवहारी) वह व्यवहारी सम्यग्दर्शन है (देव जिनेन्द्र) अद्वारह दोष राहित सर्वज्ञ वीतरागी देव (परिग्रह बिन गुरु ) (पिछी, कमण्डलु और शास्त्र के अतिरिक्त) समस्त परिग्रह के त्यागी गुरु (दया जुत धर्म) अहिंसा प्रधज्ञान वीतराग धर्म (सारो ) उत्कृष्ट है (ये हु मान समकित को कारण) ये चारों अर्थात् सच्चे देव, शास्त्र, गुरु, धर्म ही सम्यक्त्व का कारण है, ऐसा मानकर यहां (अष्ट अंग जुत धारो) सम्यग्दर्शन आठ अंगों सहित धारण करना चाहिये ।

भावार्थ - ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नामरु गोत्र एवं अन्तरङ्गिण इन आठों कर्मों से वेष्टित (घिरे हुये) संसार आत्मा चारों गति चौश्रासी लाख योनी में विभिन्न प्रकार की पर्यायों से परिणमन करता हुआ दुख पा रहा है, किन्तु जो आत्मा रत्नत्रय रूप पुरुषार्थ के बल से अष्ट कर्म रूपी किले को खंड-खंड कर परमात्मा पद को प्राप्त होकर हमेशा के लिए प्रतिक्षण असीम आनन्द का अनुभव करते हुये लोक के अग्र भाग में सुशोभित होते हैं । इसी का नाम आचार्यों ने स्वभावाश्रित सांसारिक भाव से रहित मोक्ष अवस्था अर्थात् मोक्ष तत्व कहा है ।

.८९.

इस प्रकार सातों तत्वों की यथावत् आस्था से व्यवहार सम्यग्दर्शन धारण कर जो सम्यग्दृष्टि भव्यात्मा अद्वारह दोष रहित छयालीस गुण सहित सर्वज्ञ वीतरागी एवं हितोपदेशी सच्चे जिनेन्द्र देव की उपासना करता है। एवं विषय कषाय तथा आरम्भ परिग्रह से विरक्त आत्म स्वरूप में अनुरक्त आगम का स्याद्वाद शैली से प्रतिपादन करने वाले दिगम्बर मुनिराजों के द्वारा निर्देशित मार्ग का अनुसरण करता है और तीर्थकर देव के मुखारविन्द से मुखरित द्वादशांग वाणी का स्याद्वाद नय प्रमाण से निरन्तर मन्थन करता हुआ तत्व निर्णय करता है, साथ ही अहिंसा प्रधान समस्त भव्य प्राणियों को सुखद जन-जन उपकारी वीतराग धर्म को धारण करने के लिये तत्पर रहता है, वही सम्यक्त्व परिणति है।

इस प्रकार सच्चे देव, शास्त्र, गुरु एवं धर्म के प्रति आस्था ही सम्यग्दर्शन की प्राप्ति में कारण है, क्यों कि तत्व निर्णय में सम्यग्दृष्टि जीव की आस्था स्वाभाविक रूप से अवगाढ इनके प्रति रहती है। अतः हमें अष्ट अंगों से समन्वित ऐसे सम्यग्दर्शन को अवश्य धारण करना इष्ट है तथा अपना धर्म पुराषार्थ अपने आप में जगाकर मोक्ष पुरुषार्थ की और अग्रसार होना चाहिये।

प्रश्न १. मोक्ष तत्व किसे कहते हैं ?

उत्तर- सम्पूर्ण कर्मों से पूर्ण विमुक्त होकर स्व-स्वभाव में रहना मोक्ष तत्व है।

प्रश्न २. मोक्ष में जीव क्या करते हैं ?

.९०.

उत्तर - मोक्ष होने पर जीव सहज विशुद्ध अनन्त गूणों से युक्त निराकुल अक्षय आनन्द का उपभोग करते हैं।

प्रश्न ३. क्या मोक्ष का आनन्द हमारे इन्द्रिय जन्य आनन्द सदृश ही है ?

उत्तर -मोक्ष का आनन्द उपमातीत अक्षय है, स्वयं से उत्पन्न होने वाला है, जबकि इन्द्रिय जन्य सुख क्षणिक विनाशीक है। मोक्ष सुख की तुलना इन्द्रिय जन्म सुख से नहीं की जा सकती है।

प्रश्न ४. मोक्ष से जीव लौटकर आते हैं क्या ?

उत्तर - मोक्ष अवस्था प्राप्त करने के बाद कोई भी पुनः संसार अवस्था में लौटकर नहीं आतेक्योंकी (जो आनन्द प्रतिक्षण मोक्ष अवस्था में प्राप्त होता है, उसकी संसार में कल्पना भी नहीं की जा सकती है। दूसरी बात यह भी है कि मोक्ष में जीव पूर्ण शुद्ध अवस्था को प्राप्त करके जाता है ) एक बार शुद्ध अवस्था को प्राप्त हो जाने के पश्चात् अशुद्ध अवस्था नहीं होती।

प्रश्न ५. व्यवहार सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ?

उत्तर - उपरोक्त तत्वों काज्ञेय, हेय, उपादेय, ध्येय रूप से यथार्थ श्रद्धान करना व्यवहार सम्यग्दर्शन है।

प्रश्न ६. सच्चे देव किन्हें कहते हैं ?

उत्तर- सर्वज्ञ, वीतरागी, हितोपदेशी अट्टारह दोषों से रहित जिनेन्द्र भगवान को सच्चे देव कहते हैं।

प्रश्न ७. सच्चे शास्त्र किसे कहते हैं ?

.९९.

उत्तर - तीर्थकरों की दिव्य ध्वनि से ध्वनित द्वादशांग रूप श्रुत ज्ञान से वीतरागी आचार्यों द्वारा रचित शास्त्रों की सच्चे शास्त्र कहते हैं।

प्रश्न ८. सच्चे गुरु किन्हें कहते हैं ?

उत्तर -विषय कषाय एवं आरम्भ परिग्रह से मुक्त तथा अट्टाईस मूल गुणों से युक्त दिगम्बर मुनिराजों को सच्चे गुरु कहते हैं।

प्रश्न ९. सच्चा धर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर -सच्चे सुख के जनक अहिंसा प्रधान वीतराग धर्म की सच्चा धर्म कहते हैं।

प्रश्न १०. सच्चे देव ,शास्त्र गुरु एवं धर्म की आस्थां से सम्यग्दृष्टि जीव का क्या मतलब है ।

उत्तर- सम्यग्दृष्टि जीव सच्चे देव, शास्त्र , गुरु एवं धर्म की आस्था पूर्वक अपने ज्ञान एवं आचरण को निर्मल बनाने का पुरुषार्थ करता है ।

प्रश्न ११. सम्यग्दर्शन के कितने अंग है और यह कितने दोष रहित है ?

उत्तर- सम्यग्दर्शन के आठ अंग है, और यह दर्शन २५ दोषों से रहित होता है ।

प्रश्न १२. सम्यग्दर्शन की प्राप्ति किन कारणों से होती है ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन की प्राप्ति में मूल कारण स्वरूप श्रद्धान एवं सप्त प्रकृतियों का उपशम, क्षय, क्षयोपशम है तथा इनके अनन्तर तत्त्व श्रद्धान, देव, शास्त्र, गुरु समागम, धर्मोपदेश, जाति स्मरण, वेदना, संस्कार आदि अनेकों कारण कहे जा सकते है ।

.९२.

प्रश्न १३. गतियों की अपेक्षा सम्यक्त्वीत्पत्ति के कारण कितने है ?

उत्तर - सम्यक्त्वात्पत्ति के बाह्य साधन या कारण कई प्रकार के होते है जैसे-नरक गति में तीसरे नरक तक, जाति स्मरण, धर्म श्रवण और दुःखानुभव ये तीन तथा चौथे से सातवें नरक तक जाति स्मरण और दुःखानुभव ये दो साधन है । तिर्यञ्चगति और मनुष्यगति में जाति स्मरण, धर्म श्रवण औश्र जिनबिम्ब दर्शन ये तीन साधन है। देवगति में बारहवें स्वर्ग तक जातिस्मरण, धर्म श्रवण, जिन कल्याणक दर्शन और देवर्द्धि दर्शन ये चार साधन है, तेरहवे स्वर्ग से सोलहवे स्वर्ग पर्यन्त देवर्द्धि दर्शन को छोडकर शेष तीन तथा नवग्रैवेयको में जातिस्मरण और धर्म श्रवण ये दो साधन है। इसके आगे सम्यग्दृष्टि जीव ही उत्पन्न होते है ।

प्रश्न १४. लब्धि किसे कहते है और उसके कितने भेद है ?

उत्तर - प्राप्ति अर्थात सम्यक्त्व ग्रहण के योग्य सामग्री की प्राप्ति को लब्धि कहते है । लब्धियों के पांच भेद है इ

१. क्षयोपशम, २. विशुद्धि. ३. देशना, ४. प्रायोग्य, ५. करणालब्धि ।

प्रश्न १५. पांचो लब्धियों का अर्थ सरल शब्दों में स्पष्ट करो ?

उत्तर - क्षयोपशम लब्धि - अशुभ कर्मों की अनुभाग शक्ति का प्रतिसमय अनन्तगुणा हीन होकर, उदीरणा को प्राप्त होना क्षयोपशम लब्धि है। इससे उत्तरोत्तर परिणाम निर्मल होते हैं।

विशुद्धि लब्धि - निर्मलता विशेष को या साता वेदनीय आदि प्रशस्त प्रकृतियों के बन्धों में कारणभूत परिणामों की प्राप्ति को विशुद्धि लब्धिकहते हैं।

.९३.

देशना लब्धि - उपदेश ग्रहण करने की क्षमता को देशनालब्धि कहते हैं। छह द्रव्य और पदार्थों के ज्ञाता गुरु के द्वारा उपदृष्टि अर्थ को अवधारण करने को देशना लब्धि कहते हैं।

प्रायोग्य लब्धि - आयु कर्म को छोड़कर शेष सभी कर्मों की स्थिती का अनन्तः कोडाकोडी सागर प्रमाण कर देना और अशुभ कर्मों में ये घातिया कर्मों के अनुभाग को लता और दारु इन दो स्थानगत तथा अघातिया कर्मों के अनुभाग को नीम और कांजी इन दो स्थानगत कर देना प्रायोग्य लब्धि है।

करण लब्धि - करण का अर्थ परिणाम है अर्थात् वे परिणाम जो नियम से प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन की प्राप्ति में कारण हैं उनकी प्राप्ति को करण लब्धि कहते हैं।

प्रश्न १६. क्या सभी जीवों के पांचो लब्धि संभवं है ?

उत्तर - अभव्य मिथ्यादृष्टि जीव के करण लब्धि को छोड़कर शेष चार लब्धि हो सकता है लेकिन जो सम्यग्दर्शन के सम्मुख है, ऐसे भव्य जीव को ही ५ लब्धि प्राप्त होती है।

सम्यक्त्व के पच्चीस दोष और आठ गुण

वसुमद टारि निवारी त्रिशठता, षट अनायतन त्यागो ।

शंकादिक बसु दोष बिना, संवेगादिक चित्त पागो ॥

अष्ट अंग अरु दोष पच्चीसों, तिन संक्षेपै कहिये ।

बिन जाने तें दोष गुणन को , कैसे तजिये गहिये ॥ ११ ॥

.९४.

अन्वयार्थ - (वसु मद टारि) आठ मदों को छोड़कर (त्रि शठता निवारी) तीन मूढता से परे होकर (षट् अनायतन त्यागो) छह अनायतनों का त्याग करो । (मंकादिक) शंकां क्षादि (वसु दोष बिना) आठ दोषों से रहित (शंवेगादिक चितपागो) संवेग अनुकम्पा आदि गुणों को धारण करना चाहिये । (अष्ट अंग अर दोष पच्चीसों) आठ अंग और २५ दोष है । (तिन संक्षेपै कहिये) उनका संक्षेप से विवेचन किया जाता है (बिन जाने तै) बिना समझे (दोष गुणन को ) दोष और गुणों को (कैसे तजिये गहिये) किस प्रकार त्याग और ग्रहण किया जा सकता है ।

भावार्थ - प्रत्येक भवयात्मा निरन्तर मोक्ष सुख पाने के लिये लालाकयत है । सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक चारित्र इन तीनों की एकता मोक्ष मार्ग है । इनमें प्रथम स्थान सम्यग्दर्शन को प्राप्त है , जिसे मोक्ष महल की प्रथम सीढी कहा जाता है । करणानुयोग की अपेक्षा से सम्यग्दर्शन के मूल में तीन भेद है । उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक । अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ एवं मिथ्यात्व सम्यक मिथ्यात्व और सम्यक प्रकृति इन तीनों के क्षय होने पर क्षायिक सम्यक्त्व और उपशम होने पर उपशम तथा संघाती प्रकृतियों का उदयाभावी क्षय, उन्ही का सद्वस्था रूप उपशम और देयाघसाती सम्यक प्रकृति के उदय में क्षयोपशम सम्यक्त्व होता है । ऐसा सम्यक्त्व धारी जीव पच्चीस दोषों से रहित और आठ मूल गुणों से सहित होता है । पच्चीस दोषों में आठ मद, आठ शंकादि दोष, तीन मूढता और छह अनायतन इस प्रकार इन पच्चीस दोषोंसे रहित एवं संवेग, अनुकम्पा आदि भावना के साथ अष्ट गुणों से विभूषित सम्यग्दृष्टि जीव होता है । उन पच्चीस दोष और आठ मदों की विवेचना संक्षेप से की जा रही है, क्योंकि दोष और गुणों का परिज्ञान किये बिना गुणों को अपनाना और दोषों का छाटना संभव नहीं है।

.९५.

प्रश्न १. दोष किसे कहते हैं ?

उत्तर - स्वरूप प्राप्ति में बाधक कारणों को दोष कहते हैं या विकार भाव को दोष कहते हैं ।

प्रश्न २. शंकादि दोष कितने होते हैं ?

उत्तर - ये आठ होते हैं । (१) शंका (२) आकांक्षा (३) विचीकित्सा (४) मूढदृष्टि (५) अनुपगूहन (६) अस्थितिकरण (७) अवात्सल्य (८) अप्रभावना ।

प्रश्न ३. मूढता किसे कहते हैं एवं कितनी है ?

उत्तर - देखो देखी बिना विवेक के क्रिया करने को मूढता कहते हैं। मूढता तीन है (१)देव मूढता (२)गुरु मूढता (३)लोक मूढता।

प्रश्न ४. अनायतन किसे कहते, कितने होते हैं ?

उत्तर - अपूज्य स्थान एवं पुरुष अर्थात् कुदेव, कुशास्त्र, कुगुरु तथा उनके प्रशंसकों को अनायतन कहते हैं। अनायतन छह है (१)कुगुरु (२) कुदेव (३) कुगुरु सेवक (४) कुधर्म (५) कुदेव सेवक (६) कुधर्म सेवक।

प्रश्न ५. मद किसे कहते हैं एवं कितने होते हैं ?

उत्तर - अहंभाव को मद कहते हैं। मद आठ होते हैं, उनमें नाम निम्न प्रकार है (१) जाति (२) कुल (३) पूजा (४) रूप (५) ज्ञान (६) विद्या (७) बल (८)तप।

.९६.

प्रश्न ६. प्रशम किसे कहते हैं ?

उत्तर - कषायों की मन्दता अर्थात् क्रोधादि कषायों का उपशम होना प्रशम है।

प्रश्न ७. संवेग किसे कहते हैं ?

उत्तर - संसार शरीर भोगों से भ्रंयभीत होना ही संवेग है (भद्र परिणाम)

प्रश्न ८. अनुकम्पा किसे कहते हैं ?

उत्तर - मिथ्यात्व से प्रेरित पाप कर्म से पीडित दुःखी जीवों को देखकर मन में करुणा या दया का भाव आना अनुकम्पा है। (वात्सल्य भाव)

प्रश्न ९. आस्तिक्य किसे कहते हैं ?

उत्तर - षट् द्रव्य रूप लोक में विश्वास रखते हुये स्वात्म स्वरूप की आस्था जगाना ही आस्तिक्य है । (सत्य निष्ठा)

प्रश्न १०. पच्चीस दोषों को जानने की क्या आवश्यकता है ?

उत्तर - पच्चीस दोषों का परिज्ञान किये बिना उनसे मुक्त होना संभव नहीं है । अतः पच्चीस दोषों को समझकर ही छोड़ा जा सकता है ।

प्रश्न ११. आठ अंगों को समझना क्यों आवश्यक है ?

उत्तर - आठ अंगों को समझे बिना अपने में धारण करना, उनको अपने जीवन में स्थान देना शक्य नहीं है । अतः अपने जीवन में उतारने के लिये आठ अंगों का ज्ञान आवश्यक है ।

.१७.

आठ अंग

जिन वच में शंका न धार, वृष भव सुख वांक्षा भाने ।  
मुनि तन मलिन न देख घिनावै, तत्व कुतत्व पिछाने ॥  
निज गुण अरु पर औगुण ढांके, वा निज धर्म बढावे ।  
कामादिक कर वृषितै चिगतै, निज पर को सु दिढावै ॥ १२ ॥  
धर्मी सों गौ वच्छ प्रीति सम, कर जिन धर्म दिपावै ।  
इन गुण्ते विपरीत दौष वसु, तिनको सतत् खिपावे ॥

अन्वयार्थ - (जिन वच में शंका न धार) जिनेन्द्र भगवान के वचनों में शंका नहीं करना (वृष) धर्म को धारण करके (भव सुख वांक्षा न भाने) सांसारिक सुख की इच्छा न करना (मुनि तन मलिन न देख घिनावै) मुनि महाराज के मलिन शरीर को देखकर घृणा नहीं करना (तत्व कुतत्व पिछाने) तत्व कुतत्व में विवेक रखना चाहिये । (निज गुण) अपने गुण (अरु पर औगुण ढांके ) और दूसरों के अवगुणों को ढांकना (वा) अथवा (निज धर्म बढावै) आत्म धर्म, वीतराग धर्म की वृद्धि करना चाहिये । (कामादिक कर वृषितै चिगतै) काम, क्रोधादि विकारों का निमित्त पाकर स्वयं अपने मन को और दूसरे के मन को धर्म से विचलित होने पर (निज पर को) अपने आपको

या अन्य किसी को (सुदुढावै) धर्म मार्ग पर स्थित करें (धर्मी सों ) धर्मात्मा जीवों से (गौ वच्छ प्रीतिसम ) गाय बछड़ें की प्रीति के समान (कर जिन धर्म दिपावें ) जिन धर्म को प्रकाशित करना चाहियें(इन गुणतैं) निशंकित आदि गुणों से (विपरीत वसु दोष)

विपरीत आठ दोष है (तिनको सतत खिपावै )उनको परिपूर्ण नष्ट करना चाहिये ।

भावार्थ - जिस प्रकार न्यून अक्षर मन्त्र विष वेदना को करने में समर्थ नहीं है , ठीक उसी प्रकार अंग हीन सम्यग्दर्शन भी जन्म सन्तति का विच्छेद करने में सक्षम नहीं होता । सांगोपांग सम्यग्दर्शन की महिमा मनुष्य क्या देवों मे भी पायी जाती है ।

.९८.

सम्यग्दर्शन के अभाव में ज्ञान और चारित्र का कोई महत्व नहीं है, परन्तु अंग विहोन सम्यग्दर्शन का महत्व भी निर्मूल है । जिनेन्द्र भगवान की वाणी में अङ्गि आस्था निशंकित नाम का पहला अंग है । नियम, व्रत, विधि, विधान आदि धार्मिक अनंष्टानरों से किसी प्रकार के इन्द्रिय सुखों की कांक्षा नहीं करना निकांक्षित नाम का दुसरा अंग है । मूनिराज आदि के मलिन शरीर एव कुष्ट आदि रोग से पीडित रोगी तथा अन्य घृणीत पदार्थों में ग्लानि नहीं करना निर्विचिकित्सा अंग है । मिथ्या मतियों की कपोल कल्पना या चमत्कारों से प्रभांविता न होकर वस्तु अथवा में दृढ आस्था रखना अमूढ दृष्टि नामक चतुर्थ अंग है । अपने में अनेक विशेषताये होने पर भी अपनी प्रशंसा नहीं करना और दूसरों में सर्व गुणों का अभाव होने पर भी निन्दा नहीं करना यह पांचवा उपगूहन अंग है । आत्मा गुणों की रक्षा करते हुये काम क्रोधादि से स्वयं का मन या अन्य किसी साधर्मी भाई का मन धर्म से विचलित हो ने पर जैसे बने तैसे स्व पर को स्थिर रखना यही छटवौं स्थितिकरण अंग है । आत्म गुणों में अभिरुचि रखते हुये विश्व के सभी प्राणियों को अपने समान समझकर उनसे मैत्री भाव रखना यह सम्यग्दर्शन का सातवां वात्सल्य अंग है । रत्नत्रय के द्वारा आत्म गुणों को विकास में लाते हुये दान , पूजा, सम्यग्ज्ञान प्रभांवना हेतु शिक्षण शिविर धार्मिक विद्यालय पाठशाला आदि के द्वारा धर्म के प्रति भव्य प्राणियों की आस्था बढाना सम्यग्दर्शन का प्रभावना नाम का अष्टम अंग है । इन आठों अंगों के स्वरूप को समझकर हमें अपने जीवन में उतारना और इनसे विपरीत जो शंकादिक आठ दोष है उनको प्रयत्न पूर्वक नष्ट करना ही सच्चा सम्यग्दर्शन आराध्य है ।

प्रश्न १. अंग किसे कहते हैं एवं सम्यग्दर्शन के अंग कितने होते हैं ?

उत्तर - किसी भी वस्तु क अभिन्न हिस्से कसे अंग कहते हैं । सम्यग्दर्शन क (१)निशंकित (२) निकांक्षित (३)निर्विचिकित्सा (४) अमूढ दृष्टि (५)उपगूहन (६)स्थितिकरण (७)वात्सल्य और (८) प्रभावना, इस प्रकार आठ अंग होते हैं ।

प्रश्न २. निशंकित अंग किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिनेन्द्र भगवान की वाणी में किसी प्रकार की शंका नहीं करना निशंकित अंग है ।

प्रश्न ३. निकांक्षित अंग किसे कहते हैं ?

उत्तर - धर्म को घारण करके फलस्वरुप सांसारिक सुखों की वांछा न करना निकांक्षित अंग है ।

प्रश्न ४. निर्विचिकित्सा अंग किसे कहते हैं ?

उत्तर - मुनिराज आदि के मलिन शरीर या अन्य मलिन वस्तुओं को देखकर ग्लानि नहीं करना निर्विचिकित्सा अंग है ।

प्रश्न ५. अमूढ दृष्टी अंग किसे कहते हैं ?

उत्तर - वस्तु व्यवस्था में आर्ष पध्दत से तत्व कुतत्व का निर्णय कर आस्था रखना अमूढ दृष्टि अंग है ।

प्रश्न ६. उपगूहन अंग किसे कहते हैं ?

उत्तर - आत्म गुणों का आश्रय लेते हुये अपनी प्रशंसा और दूसरों की निन्दा नहीं करना उपगूहन अंग है ।

प्रश्न ७. स्थितीकरण अंग किसे कहते हैं ?

उत्तर - अपने स्वभाव में स्थिर रहने की भावना से, कामादि विकारों से अपना या अन्य किसी साधर्मी भाई का मन धर्म से विचलित हो तो उसे जैसे भी बने वैसे अपने कर्तव्य में स्थिर रखना यही स्थितकरण अंग है ।

प्रश्न ८. वात्सल्य अंग किसे कहते हैं?

उत्तर - निजात्म गुणों में प्रीति रखते हुए विश्व के सभी प्राणियों, साधर्मी भाई बन्धुओं में प्रेम भाव रखना वात्सल्य अंग है ।

प्रश्न ९. प्रभावना अंग किसे कहते हैं ?

उत्तर - रत्नत्रय के द्वारा आत्मस्वरूप की निर्मलता एवं दान पूजा तथा सम्यक ज्ञान के प्रचार प्रसार आदि के आयाजन कर भव्यात्माओं के मन में धर्म का आकर्षक प्रभाव जमाना प्रभावना अंग है ।

#### आठ मद

पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै ।

मद न रूप की, मद न ज्ञान को, धन बल को मद भानै ॥ १३ ॥

तप को मद न, मद जु प्रभुता को, करै न सो निज जानै ।

मद धारें तो यही दोष वसु, समकित को मल ठाने ॥

अन्वयार्थ - (पिता भूप वा मातुल) अपना पिता भूपति अथवा मामा राजा (जो होय तो मद न भानै ) यदि होय तो अभिमान नहीं करना चाहिए (रूप को मद न ) अगर अपना रूप सुन्दर हो तो उसका मद नहीं करना चाहिए । (मद ज्ञान को न) ज्ञान का मद नहीं करना चाहिए (धन बल को मद न भानै) धन और बल का मद नहीं करना चाहिए (तप को मद न ) तपस्या का मद नहीं करना चाहिए (प्रभुता को मद न ) अपने

स्वभाव अथवा ऐश्वर्य का मद नहीं करना चाहिए। (करै सौ न निज जानै) इन आठ प्रकार का जो अभिमान नहीं करता वही अपने स्वरूप को जान सकता है। (मद धारें तो यही दोष वसु) यदि आठ मदों को धारण करें तो इन्हीं आठ मदों से उत्पन्न हुआ दोष। (समकित को मल ठानै) सम्यग्दर्शन को मलिन बना देता है।

भावार्थ - निज सम्पत्ति ऋजुता गुण को भूलकर अभिमान की संगति में निरन्तर संसार सागर में यह जीव गोता खा रहा है। ये आठ मद सम्यग्दर्शन के घटक हैं, अतः इन्हें अपने हृदय में स्थान देना अनुचित है। जाति, कुल, ज्ञान, धन, बल, तप, प्रभुता के मद में मस्त होकर स्वात्म गुणों को भूल हुए हैं। जो सम्यक पुरुषार्थ कर इन मदों को तिलाञ्जलि देकर रत्नत्रय रूप पुरुषार्थ करता है, वह मोक्ष पुरुषार्थ सिद्ध करने में सफल हो जाता है। और जो प्राणी इन आठ मदों को अपने आप में स्थान देता है, वह अपने सम्यक्त्व को मलिन करके मोक्ष मार्ग में कांटे बोता है।

प्रश्न १. कुल मद किसे कहते हैं ?

उत्तर - अपने पिता पक्ष में राजा आदि महान पुरुष हों या मैं उच्च कुल वाला हूँ ऐसा अभिमान करना कुल मद है।

प्रश्न २. जाति मद किसे कहते हैं ?

उत्तर - अपने मामा के कुल में कोई विशेष पद पर आसीन हो या विशेष समृद्धता हो तो मेरे मामा इतने समृद्धशाली हैं, लोगों के सामने ऐसा अभिमान करना जाति मद कहलाता है।

प्रश्न ३. रूप मद किसे कहते हैं ?

.१०२.

उत्तर - अपनी सुन्दर काया को देख कर मेरे समान कोई सुन्दर नहीं है ऐसा गर्व करना रूप मद है।

प्रश्न ४. ज्ञान मद किसे कहते है ?

उत्तर - थोड़े शास्त्र पढकर या लौकिक उपाधियां प्राप्त कर अपने आपको ज्ञानी मानना और दूसरों को मूर्ख समझना ज्ञान मद है ।

प्रश्न ५. धन मद किसे कहते है ?

उत्तर - पुण्य कर्म से लक्ष्मी को पाकर मैं इतना ऐश्वर्यशाली हूँ तुम क्या समझते हो, तुम जैसों को खरीद लूँगा ऐसा अभिमान करना धन मद है ।

प्रश्न ६. बल मद किसे कहते है ?

उत्तर - जवानी के जोश में, निर्बलों के बीच में मैं बलवान हूँ, मेरे में अपार शक्ति है, ऐसा अभिमान करना बल मद है ।

प्रश्न ७. तप मद किसे कहते है ?

उत्तर - व्रत उपवास आदि करके लोगों से कहना तुम क्या समझते हो मैं मासोपवासी हूँ, मैं बारह-बारह घंटे ध्यान करता हूँ, ऐसा करने वालों को तप मद कहते है ।

प्रश्न ८. प्रभुता मद किसे कहते है ?

उत्तर - लोगों के मुख से अपनी ख्याति सुनकर ऐसा अनुभव करना उकि मेरा सारे विश्व में वडप्पन या नाम हो रहा है , यह प्रभुता मद है ।

प्रश्न ९. आठ मदों का क्या नाम है ?

उत्तर - यह आठ मद सम्यग्दर्शन को मलिन बनाने है ।

.१०३.

षट् अनायतन तीन मूढता

कूगुरु कुदुव कुवृष सेवक की, नहिं प्रशंस उचरे है ।

जिनमुनि जिन श्रुत बिन, कुगूरादिक तिन्हें न नमन करें है ॥ १४ ॥

अन्वयार्थ - (कुगुरु कुदेव कुवृष सेवक की) खोटे गुरु , खोटे देव, और खोटे धर्म तथा इनके सेवकों की (प्रशंसा नहीं उचरें है) प्रशंसा नहीं करना चाहिये (जिन मुनि जिन श्रुत बिन ) जिनेन्द्र भगवान दिगम्बर मुनि और जिन बाणी के अतिरिक्त (कुगुरुरादिक) जो कुगुरु आदि है (तन्हिं नउनमन करे है) उन्हें कभी नमस्कार नहीं करना अनायतन त्याग है ।

भावार्थ - अनादि काल से इस जव ने खोटे गुरुओं के उपदेशनुसार आचरण करके, कुदेवों को सेवा भक्ति करके खोटे धर्म रूप आचरण करके एवं इन तीनों को मानने वालों की संगति व प्रशंसा काके अहर्निश संसार को बढाया है । खोटे देव, शास्त्र गुरु इन तीन और इन तीनों को मानने वालों की प्रशंसा करना छह अनायतन है । इन्हें विमोचन करना योग्य है । ज्ञानी भव्यात्मा छह अनायतनों से बिल्कुल दूर रहता है तथा सम्यग्दृष्टि जीव जिनेन्द्र भगवान, दिगम्बर मुनि और सच्ची स्वाद्धादी रूप जिनवाणी माँ के अतिरिक्त रागी-द्वेषी देव, पाखण्डी भेषधरी साधु रूप गुरु और खोटे शास्त्रों को स्वप्न में भी श्रद्धा और भक्ति से नमस्कार नहीं करता, यदि नमस्कार करता है तो सम्यग्दृष्टि नहीं है । इन तीन मुढताओं में विलीन अज्ञानी है ।

प्रश्न १. कुगुरु अनायतन किसे कहते है ?

उत्तर - रागी-द्वेषी मिथ्यावेषी कुगुरुओं को गुरु मानना यह कुगुरु नाम का अनायतन है ।

.१०४.

प्रश्न २. कुदेव अनायतन किसे कहते है ?

उत्तर - अट्टारह दोष से सहित, रागी-द्वेषी कुदेवों को देव मानना कुदेव नाम का अनायतन है ।

प्रश्न ३. कुवृष अनायतन किसे कहते है ?

उत्तर - हिंसामय खोटे धर्म में धर्मपना मानना कुवृष (कुधर्म) अनायतन है ।

प्रश्न ४. कुगुरु सेवक अनायतन किसे कते है ?

उत्तर - कुगुरुओं की सेवा करने वालों की प्रशंसा करना कुगुरु सेवक अनायतन कहलाता है ।

प्रश्न ५. कुदेव सेवक अनायतन किसे कहते हैं ?

उत्तर - कुदेव सेवकों की सेवा करने वालों की प्रशंसा करना कुदेव सेवक अनायतन है ।

प्रश्न ६. कुधर्म सेवक अनायतन किसे कहते हैं ?

उत्तर - कुधर्म सेवकों की सेवा करने वालों की प्रशंसा करना कुधर्म सेवक अनायतन है ।

सम्यग्दृष्टि की महिमा

दोष रहित गुण सहित सुधी जे, सम्यकदर्श सजै है ।

चरित मोह वश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजै है ॥

गेही पै गृह में न रचै ज्यों, जल तै भिन्न कम लहै ।

नगर नारी को प्यार यथा, कादे में हेम अमल है ॥ १५ ॥

अन्वयार्थ - (दोष रहित ) दोषों से रहित (गुण सहित) गुणों से सहित (जे सुधी) जो बुद्धीमान है (वह सम्यकदर्श सजै है ) सम्यग्दर्शन से विभूषित है (चरित मोह वश लेश न संजम पै) चारित्र मोहनीय कर्म के उदय से लेश मात्र भी संयम न होने पर भी (सुरनाथ

.१०५.

जजै है ) देवेन्द्र प्रशंसा करते हैं (गेही पै ) गृहस्थ होने पर भी (गृह में न रचै) घर में लीन नहीं है (ज्यों जल तै भिन्न कमल है) जिस प्रकार वेश्या का प्रेम होता है (कादे में हेम अमल है ) कीचड में पडा हुआ सोना भी निर्मल है ।

भावार्थ - सर्वत्र संसार में दो ही चीज मनुष्यों में विशेषरूप से दृष्टिगत होती आ रही है । उनमें से एक का नाम है गुण, और दूसरे नाम है दोष । इन गुण और दोष में से दोनों या एक-एक व्यक्तियों में अनिवार्य रूप से रहते हैं । जिनमें दोषों का सद्भाव पाया जाता है उन्हें महर्षियों ने बहिरात्मा अज्ञानी मिथ्यादृष्टि चारों गतियों रूप भव सागर में गोता खाने वाले जीव कहा है तथा जो भव्य आत्मार्ये सद्गुणों से अलंकृत है दोषों का सद्भाव जिनमें नहीं देखा जाता है । आगम की

दृष्टि से जो मानवीय गुणों से अलंकृत है उन्हें आचार्यों ने अन्तरात्मा सम्यग्दृष्टि या मोक्षमार्गी एवं जिनेन्द्र भगवान के लघु नन्दन नाम से प्रतिपादीत किया है ।

समस्त दोष अर्थात् आठ मद, आठ शांकदि दोष, छह अनायतन और तीन मूढता से रहित इस प्रकार २५ दोषों से रहित सम्यग्दृष्टि भव्य आत्मा होता है । कदाचित् चारित्र मोहनिय कर्म के तीव्र उदय से चाहता हुआ भी लेश मात्र भी संयम अर्थात् नियम अत पूर्वक चारित्र को ग्रहण नहीं कर पाये फिर भी निद र्ष सम्यग्दर्शन के प्रभाव से स्वर्गों के देव और इन्द्रों द्वारा इनको प्रशंसा एवं वन्दना आदि की जाती है ।

.१०६.

सम्यग्दृष्टि जीव की लीला कूछ विचित्र ही होती है । वह गृहस्थ अवस्था में रहकर भी घर गृहस्थी के चक्कर में अनुरक्त नहीं होता । जिस प्रकार जल में रहकर भ॰ कमल जल से ऊपर रहता है, इसी प्रकार सम्यग्दृष्टि जीव घर पर रहकर भी सबसे प्रथक रहता है। जिस प्रकार वेश्या की प्रीति मात्र पैसा कमाने के उद्देश्य से लागों के प्रति देखी जाती है, उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि की प्रीति मात्र लोकाचार का पिर्चाह करने के लिए होती है, जैसे कीचड में पडा हुआ स्वर्ण भी सदैव निर्मल रहता है, किट्ट कालिमा उसका स्पर्श नहीं कर पाती, उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि भव्ययात्मा घर गृहस्थी स्त्री, पुत्र, मित्र परिजनों के बीच रहता हुआ भी अवपे कर्तव्य एवं स्वभाव में संलग्न रहकर राग-द्वेष छल कपट, निन्दा आदि बुराई रुपी कातिमा से निर्लिप्त रहता है ।

प्रश्न १. दोष किसे कहते है ?

उत्तर - बुरे कार्य या विचार को दोष कहते है ।

प्रश्न २. दोष कितने होते है ?

उत्तर - दोष अनन्त होते है । परन्तु सम्यक्त्व गुण के घातक पच्चीस दोष है ।

प्रश्न ३. गुण किसे कहते है ?

उत्तर - सद् पुरुषों के स्वभाव या सरलता मय स्वच्छ निर्विकार रूप अच्छे विचारों को गुण कहते हैं।

प्रश्न ४. गुण कितने होते हैं ?

उत्तर - गुण अनन्त होते हैं परन्तु सम्यग्दर्शन विशेष की अपेक्षा आठ गुण होते हैं जिन्हें सम्यग्दर्शन के अंग भी कहते हैं।

.१०७.

प्रश्न ५. सम्यग्दृष्टि आत्मा किसे कहते हैं ?

उत्तर - संसार में निपुत्री जिस प्रकार पुत्र प्राप्ति की लालायत रहती है, निर्धन धन संग्रह के लिए लायत रहता है। ठीक उसी प्रकार जो आत्मा सम्यक् चारित्र धारण करने के लिए तीव्रता से लालायित रहता है उसे ही सम्यग्दृष्टि कहते हैं।

प्रश्न ६. चारित्र मोहनीय कर्म का उदय क्या सम्यग्दृष्टि जीव को संयम धारण करने से रोक सकता है ?

उत्तर - जिस समय चारित्र मोहनीय कर्म का तीव्र उदय चलता है उस समय सम्यग्दृष्टि जीव का सम्यक् चारित्र की प्राप्ति के लिए किया हुआ पुरुषार्थ विफल होता है, अतः चारित्र मोहनीय का तीव्र उदय सम्यक् चारित्र धारण करने में बाधक है।

प्रश्न ७. सम्यग्दृष्टि जीव की क्या स्वर्ग के देव पूजा करते हैं ?

उत्तर - स्वर्ग के देव सम्यग्दृष्टि जीवों की आष्ट द्रव्य से पूजन नहीं करते हैं मात्र कभी -कभी उनको नमस्कार और उनकी सहायता करते हैं। इसे ही पूजन को तो कोई आपत्ति नहीं है।

प्रश्न ८. क्या घर में रहकर भी कोई घर गृहस्थी से विरक्त रह सकता है ?

उत्तर - भेद विज्ञान के बल से जिसने निज को निज और पर को पर यथार्थ रूप से जान लिया है ऐसे भव्यात्मा घर में रहते हुए भी गृहस्थी के व्यामोह से विरक्त रह सकते हैं जैसे- भरम्र चक्रवर्ती, सेठ सुदर्शन आदि।

सम्यग्दृष्टि कहों नहीं चाता

प्रथम नरक बिन षड भू ज्योतिष, वान भवन षंड नारी ।  
थावर विकलत्रय पशु में नहिं, उपजत सम्यग्धारी ॥  
तीन लोक तिहुँ काल माँहि नहिं, दर्शन सों सुखकारी ।  
सकल धर्म को मूल यही, इस बिना करनी दुखकारी ॥ १६ ॥

अन्वयार्थ - (प्रथम नरक बिन षड भू) सम्यग्दृष्टि जीव पहले नरक के अतिरिक्त शेष छह नरकों में नहीं जाता (थावर विकलत्रय पशु में सम्यग्धारी नहिं उपजत) स्थावर , विकलत्रय तथा पशु योनि में भी सम्यग्दृष्टि जीव मर कर उत्पन्न नहीं होता (भवन वान ज्योतिष) भवनवासी व्यन्तर ज्योतिषी देवों में भी नहीं जाता (षंड नारी) नपुंसक और नारी पर्याय में नहीं जाता (तीन लोक तिहुँ काल माँहि) तीनों लोकों और तीनों कालों में (दर्शन सों सुखकारी नहिं) सम्यग्दर्शन जैसा सुख देने वा कोई नहीं है (सकल धर्म को मूल यही) यह सम्यग्दर्शन (मोक्ष मार्ग रूप) समस्त धर्मों का मूल है (इस बिना करनी दुखकारी ) सम्यग्दर्शन के अभाव में सभी क्रियाकाण्ड दुख जनक ही है।

भावार्थ - सम्यग्दृष्टि जीव ने सम्यक्त्व सहित मरण करके अगर पूर्व में नरक आयु का बंध कर लिया है और उसके अनन्तर सम्यग्दर्शन की उपलब्धि हुई है तो मात्र प्रथम नरक में उत्पन्न हो सकता है । जैसे-राजा श्रेणिक आदि । नरकों की छह भूमियों में सम्यग्दर्शन के साथ कोई भी जीव उत्पन्न नहीं होता । सभी प्रकार के भवनवासी व्यन्तर ज्योतिषी देवों में भी सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न नहीं होता । नपुंसक और सभी जाति की स्त्री पर्याय तथा स्थावर विकलत्रय पशुओं में भी सम्यग्दृष्टि जीव जन्म नहीं लेता सम्यग्दृष्टि जीव जन्म नहीं लेता । सम्यग्दृष्टि का जन्म दरिद्री नीच कुल आदि पर्यायों में नहीं होता है उसका जन्म सदैव उत्कृष्ट देव, राजा, महाराजा आदि सर्व सुखों से सम्पन्न उत्तम पर्याय में ही होता है ।

मोक्ष मार्ग में सर्वोपरि स्थान सम्यग्दर्शन का है। सम्यग्दर्शन की महिमा अचिन्त्य है। अधो, ऊर्ध्वो और मध्य इस प्रकार तीनों लोकों में और भूत भविष्य वर्तमान इस प्रकार तीनों कालों में भव्य जीवों के लिए सम्यग्दर्शन जैसा सुखानुभव कराने वाला कोई विश्व में दूसरा प्रिय मित्र नहीं है। धर्म की आधार शिला यह सम्यग्दर्शन ही है। सम्यग्दर्शन के अभाव में ज्ञान और चारित्र का कोई महत्व नहीं है। मात्र क्रियाकाण्ड आकुलता एवं राग द्वेष बढ़ाने में ही निमित्त बन सकता है। आत्म शान्ति में नहीं। आत्मशान्ति तो सम्यग्दर्शन के साथ ज्ञान और चारित्र के परिपालन से ही सम्भव है।

प्रश्न १. क्या नरक सात होते हैं ?

उत्तर - नरक सात नहीं होते, नरकों की पृथ्वी सात होती है। नरकों की संख्या चौरासी लाख है।

प्रश्न २. नरकों का संख्या चौरासी लाख किस प्रकार है ?

उत्तर - प्रथम पृथ्वी में ३० लाख, दुसरी में २५ लाख, तीसरी में १५ लाख, चौथी में १० लाख, पांचवी में ३ लाख, छठवीं में ५ कम १ लाख, सातवीं में ५ नरक है। इस प्रकार सातों पृथ्वियों में मिलाकर सातों नरकों की संख्या चौरासी लाख, होती है। इन नरकों की विवेचना कहीं कहीं बिलों के नाम से मिलती है।

प्रश्न ३. सम्यग्दृष्टि जीव कहाँ-कहाँ नहीं जाता ?

.११०.

उत्तर - अन्तिम ६ नरक भूमि पर, भवनत्रय, नपुसंक, स्त्री, स्थावर, विकलत्रय, हीनायु, दरिद्री आदि हीन पर्यायों में सम्यग्दृष्टि जीव मरकर उत्पन्न नहीं होता।

प्रश्न ४. सम्यग्दृष्टि जीव मरणोपरान्त कहाँ कहाँ जाता है ?

उत्तर- सम्यग्दृष्टि जीव स्वर्ग में देव होता है। अगर पूर्व में हो आयु का बन्ध कर लिया है तो प्रथम नरक एवं भोग भूमि में भी जा सकता है।

प्रश्न ५. हीन पर्यायों में सम्यग्दृष्टि का जन्म क्यों नहीं होता ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन के प्रताप से सम्यग्दृष्टि जीव उस सातिशय पुण्य का संचय कर लेता है जो नियम से अद्गति उत्तम सद् पर्याय में ही जीव को ले जाता है , अर्थात् ये सम्यग्दर्शन की ही महिमा है ।

प्रश्न ६. क्या इन हीन पर्यायों में सभी सम्यग्दृष्टि जीव नहीं पाये जाते ?

उत्तर - इन सभी हीन पर्यायों में सम्यग्दर्शन सहित किसी भी जीव का जन्म नहीं होता । इन पर्याय में सबल निमित्त मिलने पर या पूर्व संस्कारों के बल से सम्यग्दर्शन की उत्पत्ती की अपेक्षा से इन हीन पर्यायों में भी सम्यग्दृष्टि जीव संभव नहीं है ।

प्रश्न ७. सम्यग्दर्शन को धर्म का मूल क्यों कहा ?

उत्तर - जैसे बिना जड के वृक्ष नहीं होता, बिना नीव के मकान नहीं बनता,उसी तरह बिना सम्यग्दर्शन के ज्ञान चरित्र और मोक्ष रूपी महल नहीं बनता । इसीलिए धर्म का मूल सम्यग्दर्शन को कहा है ।

.१११.

सम्यग्दर्शन की महिमा एवं मनुष्य पर्याय की दुर्लभता

मोक्ष महल की परथम सीढी, या बिन ज्ञान चरित्रा ।

सम्यक्ता न लहै सो दर्शन, धारों भव्य पवित्रा ॥

दौल समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवे ।

यह नर भव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहीं होवे ॥

अन्वयार्थ - (मोक्ष महल की परथम सीढी ) सम्यग्दर्शन मोक्ष महल की पहली सीढी है (या बिन ज्ञान चरित्रा सम्यक्त्ववा लहै न) सम्यग्दर्शन के बिना ज्ञान सम्यक्त्वपने को (यथार्थता को) प्राप्त नहीं होता अर्थात् सम्यग्ज्ञान और सम्यक चरित्र नाम नहीं पाते (सो पवित्रा दर्शन भव्य धारो) ऐसे पवित्र सम्यग्दर्शन को हे भव्यात्माओ । धारण करो (दौल) कविवर दौलतराम स्वयं को

संबोधन करते हैं (सयाने सुन समझ चेत) हे चतूर आत्मन । जिनेन्द्र भगवान के वचनमृत को सुन कर समझते हुए सचेत हो जाओ (काल वृथा मत खोवे) समय को व्यर्थ मत जाने दो (जो सम्यक नहि होवे) अगर सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं हुई तो (यह नर भव फिर मिलन कठिन है) इस मनुष्य पर्याय का फिर से मिलना कठिन है ।

भावार्थ - महल की मंजिल तक पहुँचने के लिये आधार भूत निमित्त सीढियाँ होती हैं बिना उसीढियों के किसी भी महल की ऊँचाइयों को नहीं छुआ जा सकता । उस मकान की सभी सीढियों का आधार प्रथम सीढी है । अगर प्रथम सीढी न हो तो निराधार द्वितीय, तृतीय आदि सीढी संभव ही नहीं, ठीक इसी प्रकार मोक्ष रूपी महल की सम्यग्दर्शन प्रथम सीढी है । सम्यग्दर्शन रूपी प्रथम सीढी के अभाव में सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र रूपी सीढियाँ संभव नहीं हैं, और सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र रूपी सीढी के अभाव में मोक्ष महल की ऊँचाई को प्राप्त करना सर्वथा असंभव ही है ।

अतः इस परम पवित्र सम्यग्दर्शन को अष्ट अंगों को सहित पच्चीस दोषों से रहित सभी भवात्माको धारण करना चाहिए ।

## .112.

कविवर दौलतराम जी स्वयंके साथ भ्रूयात्माओं को संबोधन करते हुए कहते हैं कि हे विवेकी महानुभावा । यह जिनेन्द्र भगवान से संसार समुद्र से तिरने का जो उपाय बताया है, उसे सुन समझ कर सचेत हो जाओ मोक्ष मार्ग पवर चलने के लिये । वृथा समय खोने में कोई सार नहीं है । अगर इस पर्याय में सम्यग्दर्शन रूपी रत्न की प्राप्ति नहीं कर पायी तो इस मनुष्य पर्याय का पुनः मिलना अत्यन्त कठिन है ।

प्रश्न १. सम्यग्दर्शन को मोक्ष महल की प्रथम सीढी क्यों कहा ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन रूपी सीढी के बिना सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र रूपी सीढी संभव नहीं है । इसलिये सम्यग्दर्शन को मोक्ष महल की प्रथम सीढी कहा है ।

प्रश्न २. सम्यग्दर्शन के बिना ज्ञान और चारित्र सम्यक् नाम क्यों नहीं पाते ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन वस्तु के यथार्थ श्रद्धान को कहते हैं और सम्यक् श्रद्धा बिना ज्ञान और चारित्र में यथार्थता आना संभव नहीं है, इसलिए सम्यग्दर्शन के अभावमें ज्ञान और चारित्र सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र नाम नहीं पाते।

प्रश्न ३. सम्यग्दर्शन के साथ में पवित्र विशेषण क्यों लगाया ?

उत्तर - आठ अंगों से सहित और पच्चीस दोषों से रहित दिखाने के लिये पवित्र शब्द का प्रयोग किया है।

प्रश्न ४. दौलतराम जी ने किसे संबोधित किया है ?

.११३.

उत्तर - दौलतराम जी ने स्वयंअपने आपको, एवं चतुर भव्यात्माओं को संबोधित किया है की समय रहते हुए सम्यग्दर्शन रूपी रत्न को धारण करो।

प्रश्न ५. सम्यग्दर्शन धारण नहीं करने से क्या हानि है ?

उत्तर - इस मनुष्य पर्याय में अगर सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं हो सकी तो पुनः इस मनुष्य पर्याय की प्राप्ति दुर्लभ है।

---

\*तृतीय ढाल का सारांश\*

दो से तीसरा नम्बर जुड़ा हुआ है, उसी प्रकार दूसरी ढाल के भाव से तीसरी ढाल का भी संबंध स्वाभाविक संश्लेष पूर्ण है, क्योंकि दूसरी ढाल के अन्त में पंडित जी संबोधित करते हैं इ संदर्भ जग जाल भ्रमण को देहु त्याग, अब दौलत निज आत्म सुपाग संसार विषयाभिलाषा रूप सुख भगम है ऐसा जानकर त्यागो और अपने आत्म वैभव में निमग्न हो जाओ क्योंकि आत्मा की भलाई सुखमय दशा है, वह भी तभी सत्य है जब आकुलता न हो। संसार का प्रत्येक क्षण संशय, विमोह और विभ्रम रूप आकुलता से भरा है। इससे विपरीत (संसार बन्धन से उल्टा) मोक्ष में

निराकुल मुख है । अतः संशय विमोह विभ्रम से दृष्टि बदलकर सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्-चरित्र को जीवन में आपनाओ यही मोक्ष मार्ग है । ऐसा मार्ग दो प्रकार से कहा गया है । जो शुद्धात्म परिपूर्ण अखण्ड द्रव्य रूप है वह निश्चय मोक्षमार्ग और ऐसे स्वरूप का जो कारण यानि अंश रूप या सहयोगी वह व्यवहार मोक्षमार्ग है, अर्थात् पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से रहित मात्र निजात्म द्रव्य

.११४.

क्षेत्र, काल, भाव की लगन तथा निजात्म द्रव्य में ही तन्मयता, स्थिरता निश्चय मोक्षमार्ग और इसकी प्राप्ति में जो कारण है वह व्यवहार मोक्षमार्ग है । जो जीव, अजीव , अस्त्रव, बंध, संवर, निर्जरा औश्र मोक्ष इन सातों तत्वों को यथार्थ रूप से जानकर श्रद्धान करने से होता है । अतः दृढ विश्वास करने के लिए सही रूप इस तरह जानना-

जीव तत्व - बहिरात्मा- शरीर आत्मा को एक मानने वाला ।

अन्तरात्मा - शरीरादी से भिन्न आत्म स्वरूप समझकर स्वाभाविक दशा के साधक ।

परमात्मा - घातिया एवं अघातिया कर्म मल से विमुक्त निज पुरुषार्थ द्वारा स्वाभाविक सहज शुद्ध दशा को प्राप्त ।

अजीव तत्व - पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश एवं कालादि अचेतन अजीव द्रव्य है । ज्ञान दर्शनादि रहित इनके भी अनेक प्रतिभेद है ।

आस्त्रव तत्व - आत्म स्वरूप से भिन्न परावलम्बी श्रद्धान मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय योग रूप भाव ही आस्त्रव है ।

बन्ध तत्व - राग-द्वेषादि विकार के कारण आत्म प्रदेशों के साथ् पुद्गल रूप जड कर्मों का एकत्रित होना बन्ध है ।

संवर तत्व - समता से इन्द्रिय निग्रह पूर्वक स्वभाव सम्मुख दृष्टि से परलक्ष्य तथा विकारी भावों का निरोध ही संवर है ।

निर्जरा तत्व - विषयाभिलाषा रहित परिणाम से द्रव्य कर्म समाप्ति की सन्तति को निर्जरा कहते है ।

.११५.

मोक्ष तत्त्व - भाव कर्म-राग द्वेष, द्रव्य कर्म - ज्ञानावरणादि और नौ कर्म औदारिकादि शरीर रहित यथार्थ अवस्था की प्राप्ति अर्थात् पूर्ण शुद्ध स्वरूप की उपलब्धि हो मोक्ष तत्त्व है ।

इस प्रकार की सच्ची तत्व श्रद्धा सम्यक्त्व जागृति का उपाय है तथा जिन्द्र देव, निर्ग्रन्थ गुरु, दयामयी धर्म भी सम्यक्त्व में कारण है । जो आठ लक्षणों से युक्त है और पच्चीस दोषों से रहित है वही सच्चा सम्यग्दर्शन है । यही निर्दोष सम्यक्त्व उभय लोक में प्रशंसनीय, पूज्यनीय होता है । सम्यग्दृष्टि जीव का आचरण ही निराला होता है । मिथ्यात्व, अज्ञान मिट जाने से विराग, ज्ञान में प्रकर्षता विशेष हो जाती हूँ । यही कारण है कि आयु के अन्त में दीर्घ दुःख के स्थान भयावह नरक, भवनवासी, व्यन्तर ज्योतिषी देव पर्याय, नपुंसक एवं स्त्री पर्याय तथा स्थावर और विकलत्रयादि पशु पर्याय में उत्पन्न नहीं होता । अतः तीनों लोक में सदैव सच्चे सुख की जड़ अथवा अनन्त सुख का मूल उपाय सम्यग्दर्शन है, जिसके अभाव में ज्ञान और चारित्र खोखले कहे जाते हैं । अतः हे भव्य जीवों ! व्यर्थ अपनी आयु समाप्त मत करो । जागो, समझो, यदि सम्यग्दर्शन की उपलब्धि नहीं हुई तो इस मनुष्य पर्याय की पुनः उपलब्धि दुःसाध्य है ।

सम्यग्दर्शन रत्न ही सब रत्नों में सार ।

अंग सहित निर्दोष जो, गहे लहे भव पार ॥

\*ओम शान्ति\*

.116.

चतुर्थ ढाल

सम्यग्ज्ञान सु नेत्र है, चरण आचरण जान ।

यथा शक्ति शिवपथ चढो, तो सुख मिले महान ॥

परम हितकारी सम्यग्दर्शन हो जाने पर क्या कर्तव्य है ?

सम्यक् श्रद्धा धारी पुनि, सेवहु सम्यग्ज्ञान ।

स्व पर अर्थ बहु धर्म जुत, जो प्रगटा वन भान ॥

अन्वयार्थ - (सम्यक् श्रद्धा धारी ) यथार्थ श्रद्धान करके (पुनी) फिर (इसके अनन्तर ) (सेवहु सम्यग्ज्ञान) सम्यग्ज्ञान का सेवन करना चाहिए (स्व-पर) अपने और पराये (बहु धर्म जुत अर्था) अनन्त धर्म युत पदार्थ को (जो ) वह सम्यग्ज्ञान (प्रगटवन भान) प्रकाशित करने के लिए सूर्य के समान है ।

भावार्थ - सामानतया वस्तु का ज्ञान होने पर भी वस्तु के प्रति जब तक यथार्थ आस्था उत्पन्न नहीं होती तब तक वह ज्ञान सम्यग्ज्ञान नहीं कहा जाता । अतः सात तत्व एवं षट् द्रव्य मय तीनाकं लोकों में अवस्थित वस्तु व्यवस्था की जिनेन्द्र भगवान द्वारा जैसी विवेचना की गई है उसके अनुरूप ही श्रद्धान करके निरन्तर स्वरूप प्रकाशक सम्यग्ज्ञान की उपासना करना चाहिए । सम्यग्ज्ञान निजात्म स्वरूप और अनन्त धर्मों से युक्त समस्त पदार्थों के स्वस्य को सूर्य के समान प्रकाशमान अर्थात् स्पष्ट रूप से बताने में सक्षम है । इसलिए सम्यग्दर्शन के साथ-साथ सम्यग्ज्ञान की महती आवश्यकता है , यदि सुखी निर्दोष जीवन बनाना है तो ।

. ११७.

प्रश्न १. सम्यक् श्रद्धा किसे कहते हैं ?

उत्तर - वस्तु स्वरूप जैसा है उसकी उसी प्रकार आस्था करने को सम्यक श्रद्धा कहते हैं ।

प्रश्न २. सम्यग्ज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर - वस्तु स्वरूप जैसा है उसे उसी रूप से जानना सम्यग्ज्ञान है ।

प्रश्न ३. वस्तु स्वरूप कैसा है ?

उत्तर - वस्तु स्वरूप अनन्त धर्मात्मक शाश्वत अनेकान्त मय है ।

सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान में कार्य कारण का भेद

सम्यक् साथै ज्ञान होय, पै भिन्न अराधौ,  
लक्षण श्रध्दा जान, दुहु में भेद अबाधौ ।  
सम्यक् कारण जान, ज्ञान कारज है सोई,  
युगपत् होते हूँ, प्रकाश दीपकतें होई ॥ १ ॥

अन्वयार्थ - (सम्यक् साथै ज्ञान होय) सम्यग्दर्शन के साथ ही सम्यग्ज्ञान होता है (पै) फिर भी (भिन्न अराधौ) सम्यग्ज्ञान की विवेचना पृथक की है, (श्रध्दा लक्षण जान) श्रध्दा और ज्ञान दोनों का लक्षण है (दुहु में भेद अबाधौ) दोनों में भेद परस्पर बाधा से रहित है । (सम्यक् कारण जान) सम्यग्दर्शन कारण है (ज्ञान कारज है सोई) सम्यग्ज्ञान उसका कार्य है । (युगपत् होते हूँ ) एक साथ होने पर भी (प्रकाश दीपकतें होई) दीपक और प्रकाश की तरह भिन्नता है ।

भावार्थ - जिस प्रकार लोक में देखा जाता है कि प्रकाश सूर्य के उदय से भिन्न नहीं है, उसी प्रकार वस्तु स्वरूप की आस्था के साथ जिस समय सम्यग्दर्शन रूपी सूर्य

.११८.

का उदय होता है, उसी समय सम्यग्ज्ञान रूपी प्रकाश का प्रादुर्भाव होता है फिर भी कार्य कारण या संज्ञा को अपेक्षा दर्शन और ज्ञान की विवेचना भिन्न रूप से की है । अर्थात् सम्यग्दर्शन कारण और सम्यग्ज्ञान कार्य हुआ ।

सम्यग्दर्शन का लक्षण सत् श्रध्दान और सम्यग्ज्ञान का लक्षण सत् रूप जानना है । दर्शन और ज्ञान के ये दोनों भेद परस्पर विवाद और बाधा से रहित है । सम्यग्दर्शन कारण है और सम्यग्ज्ञान कार्य है । यद्यपि सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान इन दोनों गुणों की उत्पत्ति एक समय में ही होती है परन्तु जैसे लोक में यह कहा जाता है कि प्रकाश दीपक से हुआ है, इसी प्रकार यहां पर सम्यग्दर्शन के बाद सम्यग्ज्ञान की विवेचना की गई है ।

प्रश्न १. सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान दोनों एक ही है क्या ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान एक साथ में उत्पन्न होते हैं, परन्तु अपने-अपने लक्षण या गुणों की अपेक्षा दोनों भिन्न भिन्न हैं। सम्यग्दर्शन कारण है और सम्यग्ज्ञान कार्य है।

प्रश्न २. सम्यग्ज्ञान को सम्यग्दर्शन के उपरान्त सेवन करने को क्यों कहा ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति के बाद ही ज्ञान में सम्यक् पना आता है, अतः सम्यग्दर्शन के अनन्तर ही ज्ञान स्व-पर प्रकाशक बनता है।

प्रश्न ३. क्या सम्यग्दर्शन के पूर्व जीव के ज्ञान नहीं होता ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन से पूर्व ज्ञान तो प्रत्येक जीव के रहता है। यहां तक कि सूक्ष्म निगोदिया जीवों में भी मनः पर्याय नाम का ज्ञान रहता है, परन्तु सम्यग्दर्शन से पूर्व जीव के सामान्य ज्ञान ही पाया जाता है, मोक्षमार्ग में जिसका कोई महत्व नहीं है।

.११९.

प्रश्न ४. क्या सम्यग्ज्ञान सम्यग्दर्शन से पूर्व नहीं हो सकता ?

उत्तर - वस्तु स्वरूप के यथार्थ श्रद्धान के बिना यथार्थ ज्ञान असम्भव है अतः सम्यग्दर्शन से पूर्व सम्यग्ज्ञान किसी भी प्रकार नहीं हो सकता। वास्तविकता तो यह है कि दर्शन और ज्ञान दोनों में समीचीनता एक समय में ही आती है। दीपक और प्रकाश की तरह, मात्र अपेक्ष से क्रम वर्णित है।

प्रश्न ५. लक्षण किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिससे वस्तु की पहिचान होती है उसे लक्षण कहते हैं।

प्रश्न ६. कारण किसे कहते हैं ?

उत्तर - हेतु अर्थात् जिसके द्वारा कार्य हो उसे कारण कहते हैं।

प्रश्न ७. कार्य किसे कहते हैं ?

उत्तर - उद्देश्य की पूर्ति को कार्य कहते हैं।